रामचरितमानस में वर्णित गुरु महिमा

डॉ. ममता*

तुलसीदास
आरती, एन.सी.डब्ल्यू.ई.बी. द्वारा चित्रित

भारतीय साहित्य में गुरु को एक ऐसी कड़ी के रूप में दर्शाया गया है, जो भौतिक जगत और परमात्मा के बीच एक तादात्म्य स्थापित करता है। मनुष्य के जन्मदाता बेशक माता-पिता ही होते हैं परन्तु उसको उचित जीवन जीने की राह गुरु ज्ञान से ही प्राप्त होती है। गुरु ही मनुष्य को परमतत्व तक ले जाने का कार्य करता है। वही इस जीवन के जन्म-मरण से छुटकारा दिलाकर मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति की राह दिखाता है। संस्कृत साहित्य में 'गुरु' का अर्थ मनुष्य के जीवन में व्याप्त अज्ञान रूपी अन्धकार को दूर करने वाला है। अर्थात् जो ज्ञान प्रदान करने वाला है। जो मनुष्य में जीवन मूल्यों को आत्मसात कराने में सहायक होता है। कहा जाता है कि जीवन-जगत में गुरु के बिना मानव ज्ञान और अध्यात्म से वंचित है। गुरु के बिना न तो उचित ज्ञान की प्राप्ति होती है और न ही मोक्ष की। गुरु एक सजीव शरीर मात्र ही नहीं है बल्कि एक शक्ति है। गुरु एक सकारात्मक शक्ति की संज्ञा है। अर्थात् मनुष्य के निर्माण और विध्वंश की सम्पूर्ण शक्ति। गुरु मनुष्य के जीवन का उद्धारक और एक सच्चा मार्गदर्शक है। गुरु के अभाव में मनुष्य का जीवन पूर्णतः अन्धकारमय है। शास्त्र और साहित्य में कई जगह पर गुरु का महत्त्व ईश्वर से भी अधिक बताया गया है। क्योंकि गुरु के माध्यम से ही शिष्य या साधक अपने लक्ष्य तक पहुँच पाता है। साधक, शिष्य और कवि अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए गुरु का सहारा लेते हैं। भक्तिकालीन कवि तुलसीदास भी अपनी महत्वपूर्ण रचना 'रामचरितमानस' की रचना करते समय अपने गुरु का स्मरण करते हुए कहते हैं-

"बंदऊँ गुरु पद कंज कृपा सिन्धु नररूप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।"1

अर्थात् मैं उन गुरु महाराज के चरणकमल की वंदना करता हूँ, जो कृपा के समुद्र और नररूप में श्रीहरि ही हैं और जिनके वचन महामोह रूपी घने अन्धकार के नाश करने के लिए सूर्य-किरणों के लिए समूह हैं। गुरु अर्चनीय है। गुरु वन्दनीय है। गुरु पूजनीय है। ज्ञानवान व्यक्ति सदैव श्रद्धा का पात्र होता है। शिष्य के लिए वह प्रत्येक परिस्थिति में स्मरण का विषय है। इसलिए तुलसीदास अपनी कृति में 'राम' का चरित्र चित्रित करने से पूर्व अपने गुनी, ग्यानी गुरुओं की वंदना करते हैं। वे कहते हैं-

* शोधार्थी, भारतीय भाषा केन्द्र
जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।

"बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।
अमिअ मूरिमय चूरन चारू।
समन सकल भव रुज परिवारू।।"2

अर्थात् तुलसीदास जी कहते हैं कि मैं गुरु महाराज के चरणकमलों की रज की वंदना करता हूँ, जो सुरुचि, (सुन्दर स्वाद) सुगंध तथा अनुराग रूपी रस से पूर्ण है। वह अमर मूल (संजीवनी जड़ी) का सुन्दर चूर्ण है, जो सम्पूर्ण भवरोगों के परिवार को नाश करने वाला है। गुरु का ज्ञान अमृत स्वरुप होता है, जो मनुष्य के जीवन में व्याप्त समस्त अज्ञान रुपी अन्धकार को मिटा देता है। गुरु के चरणों की धूल का स्पर्श ही कई बार शिष्य के लिए परम उपयोगी साबित हो जाता है। गुरु वंदना की अगली श्रृंखला में तुलसीदास कहते हैं-

"गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन।
नयन अमिअ दृग दोष बिभंजन।।
तेहि करि बिमल बिबेक बिलोचन।
बरनऊँ राम चरित भव मोचन।।"3

अर्थात् श्री गुरु महाराज के चरणों की रज कोमल और सुन्दर नयनामृत-अंजन है, जो नेत्रों के दोषों का नाश करने वाले है। उस अंजन से विवेकरूपी नेत्रों को निर्मल करके मैं संसाररूपी बंधन से छुड़ाने वाले श्रीराम चरित्र का वर्णन करता हूँ। तुलसी अपने आराध्य का वर्णन करने के लिए अपने गुरु के चरणों की रज को भी पवित्र मानते हैं। क्योंकि गुरु के ज्ञान के माध्यम से परमात्मा तक पहुंचा जा सकता है। जो अविनाशी है, अजर-अमर है, जो हर कण में व्याप्त है। उसका साक्षात्कार गुरु की सहायता से ही संभव है। क्योंकि गुरु सही मार्ग पर चलने के लिए शिष्य को उचित ज्ञान प्रदान करता है। ताकि वह अपने ध्येय गंतव्य तक पहुँच सके। यहाँ पर तुलसीदास का ध्येय रामजी के चरित्र का वर्णन करना है। उनकी नैतिकता, उनके आदर्शवाद, मर्यादा, परोपकार, उचित न्याय, कर्तव्य और लोक कल्याण इत्यादि को समाज के समक्ष प्रस्तुत करना है। ऐसे कार्य को पूर्ण करने के लिए गुरु की सहायता आवश्यक है। तुलसी कहते हैं कि-

"गुर बिनु भव निधि तरइ न कोई।
जौं बिरंची संकर सम होई।।"4

बेशक ही कोई महादेव और ब्रह्म के समान क्यों न हो परन्तु गुरु के बिना जीवन रूपी भवसागर नहीं तर सकता है। अर्थात् गुरु जीवन रूपी भवसागर को पार करने में सहायक बनता है। गुरु पथ प्रदर्शक है। वह मनुष्य के जीवन और भविष्य को आकार देता है। वह अपने शिष्यों को कठिन परिस्थितियों से उबारने में सहयता करता है। शिष्य के मन के संशय को मिटाता है और उसके जीवन में व्याप्त द्वंद्वों का समाधान करता है। यदि गुरु और गोविन्द दोनों एक साथ खड़े हों तो भी गुरु ही महान कहा जा सकता है क्योंकि गुरु की कृपा से ही गोविन्द अर्थात् भगवान के दर्शन होते हैं। भक्तिकालीन कवि कबीरदास भी कहते हैं-

"गुरु गोविन्द दोउ खड़े काके लागौं पायं।
गुरु बलिहारी आपणै गोविन्द दियो बताय।।"5

निष्कर्ष

भारतीय ज्ञान परम्परा और समाज में गुरु का महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है। गुरु के बिना ज्ञान एक तरह से असंभव माना जाता है। गुरु अपने शिष्यों को शास्त्रीय और अनुभवजन्य दोनों ही प्रकार के ज्ञान प्रदान करता है। गुरु की महिमा को स्वीकार करने वाले मनुष्यों के लिए गुरु के शब्द तो महत्वपूर्ण होते ही हैं इसके साथ ही साथ उनके भाव की प्रधानता अधिक होती है। गुरु के प्रति शिष्य के मन में समपर्ण की भावना की आवश्यक होती है, जो तुलसीदास के काव्य रामचरितमानस में हमें दिखाई पड़ती है। उनकी इस समग्र रचना का अध्ययन करने के पश्चात हमें ज्ञात होता है कि उनके मन में गुरु के प्रति जो भाव अभिव्यक्त हुए हैं वह बहुत पवित्र और सच्चे हैं। परन्तु वर्तमान समाज में गुरु के प्रति भावना बदली है। प्रायः ऐसा देखा जाता है कि शिष्य को न तो सच्चे गुरु की प्राप्ति होती है और न ही गुरु को सच्चे, कर्मठ शिष्य की। आज के समय में गुरु का महत्व निरंतर घटता जा रहा है। दिन प्रतिदिन गुरु और शिष्य के रिश्ते में लोभ और स्वार्थ की भावना बढ़ती जा रही है। प्राचीन समय की भांति निष्पक्षता और तटस्थता नहीं रही है। लेकिन समाज में ऐसी भावना समाप्त होनी चाहिए। गुरु दूरदर्शी होता है। मानव समाज के लिए गुरु महत्वपूर्ण है क्योंकि गुरु ज्ञान के बिना जीवन रुपी भवसागर से नहीं उबरा जा सकता है। आज हम चाहे जितना आधुनिक तकनीकी ज्ञान से परिपूर्ण हो गये हों लेकिन हमें अपने प्राचीन ज्ञान और परम्परा के महत्व को नहीं भूलना चाहिए। हमारा भारतीय साहित्य ज्ञान-परम्परा से ओत-प्रोत है। हमें आधुनिक ज्ञान के साथ-साथ ही यहां से भी सीख ग्रहण करके आगे बढ़ना होगा, और हमें नये तथ्य एवं नित नए ज्ञान से परिचित कराने में गुरु की अहम भूमिका है और आगे भविष्य में भी रहेगी। गुरु समाज शिष्य वर्ग के लिए सदैव उपयोगी एवं प्रासंगिक है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. तुलसीदास, रामचरितमानस, बालकाण्ड, पृष्ठ संख्या 18
2. वही... पृष्ठ संख्या -18
3. वही... पृष्ठ संख्या -18
4. तुलसीदास, रामचरितमानस, उत्तरकाण्ड, पृष्ठ संख्या 807
5. श्यामसुन्दर दास, कबीर ग्रंथावली।

❖❖❖❖